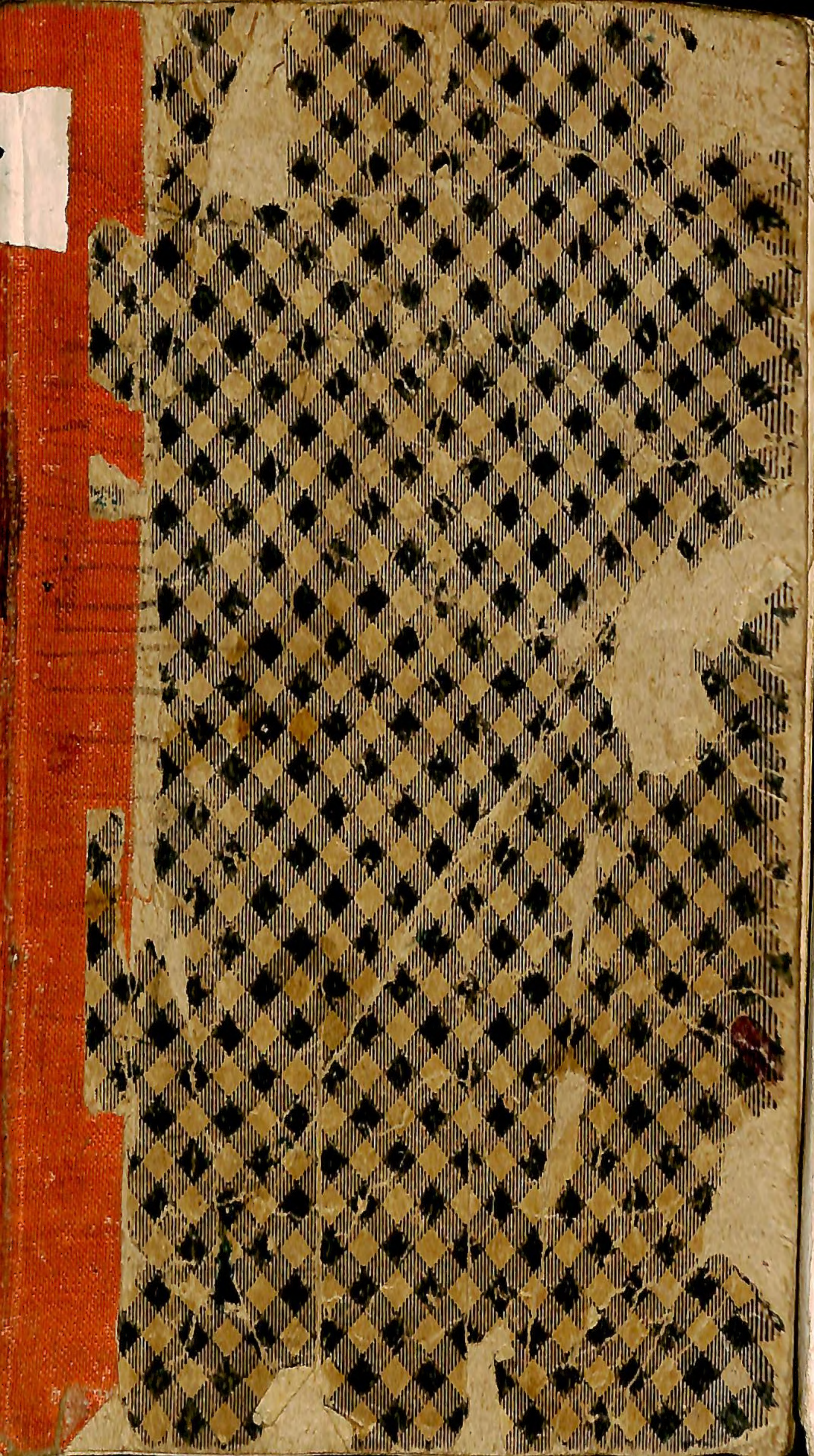


२ द स M. D. Malti Devi

* श्रीगणेशाय नमः *

श्रीराजस्थान-संस्कृत-कालेज-ग्रन्थमालायाः

छन्दोमन्दाकिनी

[सन् १९३७ की नई नियमावली के अनुसार प्रथम-परीक्षोपयोगी १६ छन्दों का सबसे उत्तम सरल संग्रह ।]

संस्कर्ता

श्रीगुरुप्रसादशास्त्री,

व्याकरणाचार्यः, न्यायाचार्यः, दर्शनाचार्यः ।

प्रकाशक

भार्गव पुस्तकालय,

गायघाट, बनारस.

मूल्य ≡)

पण्डितराजश्रीस्नेहिरामजीशास्त्रि (चिड़ावा-जयपुर) स्मारिकायाः—
श्रीराजस्थान-संस्कृत-कालेज-ग्रन्थमालायाः
सप्तमकुसुमम्

छन्दोमन्दाकिनी

[सन् १९३७ की नई नियमावली के अनुसार प्रथमपरीक्षोपयोगी
१६ सोलह छन्दों का सबसे उत्तम सरल सङ्ग्रह ।]

समलङ्कर्त्ता—
श्रीगुरुप्रसादशास्त्री,
व्याकरणाचार्य, न्यायाचार्य, दर्शनाचार्य,
[प्रिन्सिपल-श्रीराजस्थान-संस्कृत-कालेज, काशी]

प्रकाशक
भार्गवपुस्तकालय, गायघाट, बनारस

चतुर्थावृत्तिः] १९४० [मूल्यम् ≈) आणकः



श्रीमहागणपतये नमः

श्रीगुरुप्रसादशास्त्रिविरचिता—

प्रथमपरीक्षोपयोगि-च्छन्दःसङ्ग्रहरूपा—

छन्दो-मन्दाकिनी

वाचस्पत्यवताराणां 'स्नेहिरामजि'-शास्त्रिणाम् ।
मरुमण्डलमार्त्तण्ड-पादपङ्कजयोर्भजे ॥ १ ॥

छन्दः

छन्दो द्विविधमुद्दिष्टं मात्रा-वर्ण-विभेदतः ।
आर्यादि प्रथमं तत्र, द्वितीयं स्रग्धरादिकम् ॥ १ ॥

[टीका] द्विविधं हि छन्दो भवति [१] मात्राच्छन्दः, [२] वर्णच्छन्दश्चेति । यत्र [च्छन्दसि] मात्राणां=ह्रस्वदीर्घाक्षरोच्चारण-समकालरूपमात्राणामेव गणना भवति तन्मात्राच्छन्दः । यथा—आर्यादिच्छन्दःसु मात्रागणनैव भवतीति तन्मात्राच्छन्द इत्युच्यते । यत्र च वर्णगणनया छन्दोनिर्धारणं तद्वर्णच्छन्द इत्युच्यते । यथा—स्रग्धरादिकम् । किञ्च—मात्राच्छन्दो 'जातिः' इत्युच्यते । यथा—'आर्या जातिः' 'गीति-जातिः'—इति । वर्णच्छन्दो 'वृत्तम्' इत्युच्यते । यथा 'स्रग्धरा वृत्तं', 'हरिणी-वृत्तम्'-इति ।

[भा०टी०] छन्द दो प्रकार के होते हैं–मात्रा-छन्द, और वर्ण-छन्द। [१] **मात्रा-छन्द**--जो छन्द मात्राओं की सङ्ख्या के आधार पर बनत हैं, वे मात्राछन्द कहलाते हैं। जैसे 'आर्या' 'उपजाति' 'उपगीति' 'गीति' आदि। इन छन्दों में प्रायः लघु गुरु स्थापन के नियम की अपेक्षा नहीं रहती केवल मात्राओं की गिनती परही ये बनते हैं।

[२] **वर्णच्छन्द**--इनमें लघु गुरु वर्णों के स्थापन में क्रमविशेष की अपेक्षा होती है। 'जैसे 'स्रग्धरा' 'वसन्ततिलका' आदि में।

इन दोनों प्रकार के छन्दों में प्रत्येक में चार २ चरण (पाद) होते हैं।

वर्णछन्दों के भेद

युक् समं, विषमं चायुक् स्थानं सद्भिर्निगद्यते।
सममर्धसमं वृत्तं विषमं च तथा परम्॥ २॥
अङ्घ्रयो यस्य चत्वारस्तुल्यलक्षणलक्षिताः।
तच्छन्दःशास्त्रतत्त्वज्ञाः 'समं वृत्तं' प्रचक्षते॥ ३॥
प्रथमाङ्घ्रिसमो यस्य तृतीयश्चरणो भवेत्।
द्वितीयस्तुर्यवद्वृत्तं तदर्धसममुच्यते॥ ४॥
यस्य पादचतुष्केऽपि लक्ष्म भिन्नं परस्परम्।
तदाहुर्विषमं वृत्तं छन्दःशास्त्रविशारदाः॥ ५॥

[**भाषाटीका**] वर्णच्छन्द (वृत्त) तीन तरह के हैं–

[१] समवृत्त, [२] अर्धसमवृत्त और [३] विषमवृत्त।

[१] **समवृत्त**-इसमें चारों चरणों में एक ही नियम से गुरु-लघु (गण) रखे जाते हैं। अर्थात्–जो पहिले पाद का लक्षण होगा वही बाकी के तीनों पादों का भी होगा। जैसे 'वसन्त-तिलका' 'शिखरिणी' आदि में चारों चरणों में एक ही लक्षण है।

[२] **अर्धसमवृत्त**--इसमें विषम [पहिला-तीसरा] चरण एक तरह का और सम [दूसरा-चौथा] चरण एक तरह का होता है। जैसे–

'वियोगिनी' आदि में। इन वृत्तों के लक्षण वृत्तरत्नाकर में दिए गए हैं।

[३] **विषमवृत्त**--इनमें चारों चरणों के लिए अलग २ नियम से लघु-गुरु (गण) रखे जाते हैं--जैसे-'आपीड', 'उद्गता' आदि छन्दों में। इन वृत्तों के लक्षण भी 'वृत्तरत्नाकर' से जाने जा सकते हैं।

लघु-गुरु-व्यवस्था

एकमात्रो भवेद्ध्रस्वो द्विमात्रो दीर्घ उच्यते।
त्रिमात्रस्तु प्लुतो ज्ञेयो व्यञ्जनश्चार्धमात्रिकम् ॥ ६ ॥

[टीका] एकमात्रिकोऽच् ह्रस्वसञ्ज्ञको लघुसञ्ज्ञकश्च भवति। एवं द्विमात्रिकोऽच् दीर्घसंज्ञको गुरुसञ्ज्ञकश्च भवति। त्रिमात्रिकश्च अच् प्लुतसञ्ज्ञको भवति। एवञ्च ह्रस्वस्य एका मात्रा, दीर्घस्य द्वे मात्रे, प्लुतस्य च तिस्रो मात्रा भवन्ति। व्यञ्जनश्चार्धमात्रिकं भवति।

[भाषाटीका] **एकमात्रिक स्वर**--अ-इ-उ-ऋ-ऌ-ये अच् 'ह्रस्व' और 'लघु' कहलाते हैं और इनकी एक मात्रा गणना होती है।

द्विमात्रिक स्वर--आ-ई-ऊ-ॠ-ए-ऐ-ओ-औ, ये अच् 'दीर्घ' और गुरु कहलाते हैं।

लघु गुरु के विशेष नियम

संयुक्ताद्यं दीर्घं सानुस्वारं विसर्गसंमिश्रम्।
विज्ञेयमक्षरं गुरु, पादान्तस्थं विकल्पेन ॥ ७ ॥

[टीका] संयोगे परे पूर्वोऽच् ह्रस्वोऽपि गुरुसंज्ञको भवति। तदेवं तस्य मात्राद्वयं भवति। एवं सानुस्वारं विसर्गसहितं च ह्रस्व-

---

१ गिनती में लघु की एक मात्रा और गुरु की दो मात्रा गिनी जाती है।

पाद के आदि का संयोग 'क्रम' कहलाता है, उसके परे रहते लघु अक्षर भी कदाचित् गुरु होता है-जैसे-"अल्पव्ययेन सुन्द**रि-ग्रा**म्यजनो मिष्टमश्नाति"-यहा सुन्द'रि' का इकार गुरु माना जाता है। ऐसे ही 'प्र'--'ह' आदि संयुक्त अक्षर रहते पूर्व ह्रस्व अक्षर भी कहीं २ (विकल्प से) गुरु होता है-['प्रहे वा' इस छन्दःसूत्र से]।

मक्षरमपि गुरुसञ्ज्ञकं भवति। एवञ्च तस्यापि मात्राद्वयं ज्ञेयम्। श्लोकपादान्तस्थं च ह्रस्वमक्षरं यथेष्टं लघु वा गुरु वा भवति।

[**भाषाटीका**] ह्रस्व अक्षर भी कहीं २ गुरु [द्विमात्रिक] माना जाता है। जैसे—

[१] अनुस्वार या विसर्ग के साथ (पूर्व) का अच् अक्षर 'ह्रस्व' भी हो तो भी वह 'गुरु' कहलाता है और उसकी दो मात्रा होती है। जैसे— अं, अः, 'रामः' 'शिवः' आदि में अकार गुरु होता है और उसकी दो मात्रा होती हैं।

[२] संयोग के आदि का 'ह्रस्व' अक्षर भी 'गुरु' होता है। जैसे— 'शम्भुः'—यहाँ मकार भकार के संयोग के आदि का—अकार गुरु है। अतः गिनती में इसकी दो मात्रा समझनी चाहिये।

पादान्तस्थव्यवस्था।

[३] श्लोक के पाद के अन्त का अक्षर लघु भी हो तो भी आवश्यकतानुसार उसे गुरु या लघु माना जाता है। जैसे—

S

'बाले ! वसन्ततिलकां किल तां वदन्ति'।

यहाँ आखिरी अक्षर 'न्ति' का इकार लघु है, परन्तु वसन्ततिलका में आखिरी अक्षर गुरु होना चाहिये अतः यह गुरु ही माना जाता है।

लघु-गुरुलेखन-प्रणाली।

ग्[1]—वक्रो ज्ञेयोऽन्यो मात्रिको ल्—ऋजुः।

[—वृत्तरत्नाकर]

[**भाषाटीका**] लघु का चिह्न—[।]—इस तरह से, और गुरु का चिह्न—[S] इस तरह से लिखा जाता है। कोई २ विद्वान् लघु का चिह्न [–] इस तरह, और गुरु का चिह्न—[˘] ऐसा भी मानते हैं। (ल्—लघु, ग्—गुरु) ॥

---

१. छन्द शास्त्र में 'गुरु' और 'ग' या 'ग्', एवं 'लघु' और 'ल' या 'ल्' ये सब समानार्थक हैं।

गणपरिगणन—

म्यरस्तजभ्नगैर्लान्तैरेभिर्दशभिरक्षरैः ।
समस्तं वाङ्मयं व्याप्तं त्रैलोक्यमिव विष्णुना ॥ ८ ॥

[टीका] (१) मगणः, (२) यगणः (३) रगणः (४) सगण, (५) तगणः, (६) जगणः, (७) भगणः, (८) नगणः—इत्यष्टौ गणाश्छन्दःशास्त्रे भवन्ति । लघुः-'लः', इति, गुरुश्च 'ग' इत्यप्युच्यते ।

[भाषाटीका] छन्दः शास्त्र में—१ मगण, २ यगण, ३ रगण, ४ सगण, ५ तगण, ६ जगण, ७ भगण, ८ नगण ये आठ गण हैं और ल—लघु, ग—गुरु कहाता है । इन १० अक्षरों से ही छन्दशास्त्र में व्यवहार चलता है ॥ ८ ॥

वर्णछन्दों में गण का स्वरूप

मस्त्रिगुरुः, त्रिलघुश्च नकारो,
भाऽऽदिगुरुः, पुनरादिलघुर्यः ।
जो गुरुमध्यगतो, र-लमध्यः,
सोऽन्तगुरुः, कथितोऽन्तलघुस्तः ॥ ९ ॥

[टीका] (१) त्रिगुरुर्मगणः—[ऽऽऽ] । (२) त्रिलघुः—नगणः [।।।] । (३) आदिगुरुर्भगणः-[ऽ।।] । (४) आदिलघुर्यगणः—[।ऽऽ] । (५) गुरुमध्यो जगणः—[।ऽ।] । (६) लघुमध्यो रगणः-[ऽ।ऽ] । (७) अन्तगुरुः सगणः-(।।ऽ) । (८) अन्तलघुस्तगणः-[ऽऽ।] ।

आर्या आदि मात्राछन्दों में गणस्वरूप—

ज्ञेयाः सर्वान्तमध्यादिगुरवोऽत्र चतुष्कलाः ।
गणाश्चतुर्लघूपेताः पञ्चाऽऽर्यादिषु संस्थिताः ॥ १० ॥

[टीका] आर्यादिमात्राच्छन्दःसु चतुर्लघूपेताः चतुर्मात्राः पञ्च गणा भवन्ति। तथाहि-(१) सर्वगुरुः-[SS] (२) अन्तगुरुः [IIS] (३) मध्यगुरुः [I S I] (४) आदिगुरुः [SII]। (५) सर्वलघुश्च-[IIII]। अत्र 'लघोरेका मात्रा भवति, गुरोर्द्वे मात्रे भवतः' इति रीत्या पञ्चस्वपि गणेषु प्रत्येकं चतुर्मात्रिकत्वं स्पष्टमेव विभाव्यते।

[भा०टी०] आर्या आदि मात्राछन्दों में तो ४-४ मात्राओं से गण बनते हैं। [दीर्घ की दो मात्रा गिनी जाती है, और ह्रस्व की १ मात्रा]।

[१] जैसे--**'रामः'**-यह सर्वगुरु गण है, क्योंकि इसमें 'आ' दीर्घ है, अतः उसकी दो मात्रा, और 'अः'-इसकी भी (विसर्ग युक्त होने से) दो मात्रा, इस तरह ४ मात्रा हो जाती है। अतः यह एक गण है।

[२] इसी तरह **'विलास'** इस शब्द में-'आ' दीर्घ है, इसलिए उसकी दो मात्रा, 'इ' की एक मात्रा और अ [ह्रस्व] की १ मात्रा, सब मिलके ४ मात्रा हो गई, अतः यह **मध्यगुरु गण** है। इसी तरह और सब गण भी जानना।

वर्णच्छन्दों में गणस्थापना की अति स्पष्ट रीति—

आदिमध्यावसानेषु भ-ज-सा यान्ति गौरवम्।
य-र-ता लाघवं यान्ति म-नौ तु गुरु-लाघवम्॥ ११॥

[भा०टी०] वर्ण छन्दों में तीन ३ वर्णों के आठ गण होते हैं। जैसे-१ **भगण** आदिगुरु—[SII] २ **जगण** मध्यगुरु—[I S I] ३ **सगण** अन्तगुरु-[II S] ४-**यगण**-आदिलघु-[I S S] ५ **रगण** मध्यलघु-[S I S] ६ **तगण** अन्तलघु-[S S I] ७ **मगण** सर्वगुरु-[S S S] ८ **नगण** सर्वलघु—[I I I]

गणों के देवता आदि का कोष्ठक

गणनाम	मगण	यगण	रगण	सगण	तगण	जगण	भगण	नगण
गणस्वरूप	SSS	ISS	SIS	IIS	SSI	ISI	SII	III
गणदेवता	पृथ्वी	जल	अग्नि	वायु	आकाश	सूर्य	चन्द्रमा	स्वर्ग
गणों का फल	श्रीवृद्धि	वृद्धि	विनाश	भ्रमण	धन-नाश	रोग	सुयश	आयु
मित्र शत्रु आदिसंज्ञा	मित्र	भृत्य	शत्रु	शत्रु	उदासीन	उदा-सीन	भृत्य	मित्र

तथा च संग्रहश्लोकः--

मो भूमिस्त्रिगुरुः श्रियं दिशति, यो वृद्धिं जलं चादिलो,
रोऽग्निर्मध्यलघुर्विनाशमनिलो देशाटनं सोऽन्त्यगः ।
तो व्योमान्तलघुर्धनापहरणं, जोऽर्को रुजं मध्यगो,
भश्चन्द्रो यश उज्ज्वलं, मुखगुरुर्नो नाक, आयुस्त्रिलः ॥

यति का परिचय

श्लोकेषु विश्रमस्थानं 'पदच्छेदं' 'यतिं' विदुः ।

[भाषाटीका] छन्दों में-वर्णों का उच्चारण करते समय-[प्रत्येक पादों में बीच में] जो जिह्वा को थोड़ा विश्राम देते हैं, उसे कविगण '**यति**' '**विश्राम**' या '**विराम**' कहते हैं ।

यतिके स्थान और नियम—

यतिर्भवति पादान्ते श्लोकार्धे तु विशेषतः ।[1]
क्वचित्तु पदमध्येऽपि कविभिर्यतिरिष्यते ॥ १२ ॥

---

१ दूसरे और चौथे चरण की अन्य किसी चरण के साथ सन्धि या समास नहीं होता है-यही दूसरे और चौथे चरणों की यति की विशेषता है ।

[भाषाटीका] (१) पाद के अन्त में थोड़ी देर ठहरना चाहिए। (२) श्लोक के दूसरे और चौथे चरण की समाप्ति पर जिह्वा को कुछ थोड़ा ज्यादा विश्राम देना चाहिए। (३) और कहीं २ पाद के बीच में भी यति होती है। जैसे-स्रग्धरा के (२१ अक्षर के) पाद में ७-७ अक्षरों पर ३ वार यति होती है (४) 'स्रग्धरा' आदि छन्दो में कभी २ पदों को बीच में से तोड कर भी यति होती है।

यतौ विशेषतो विचारः[1]

[१] व्यक्तविभक्तिके, अव्यक्तविभक्तिके च पादान्त सेर्वत्र यतिर्भवति। तत्र व्यक्तविभक्तिके पादान्ते उदाहरणं यथा--

'वागर्थाविव सम्पृक्तौ'। 'स्थितः स्थितामुच्चलितः प्रयाताम्'।

अव्यक्तविभक्तिके पादान्ते यथा--

नमस्तुङ्गशिरश्चुम्बि-चन्द्रचामरचारवे।

त्रैलोक्यनगरारम्भ-मूलस्तम्भाय शम्भवे॥

[२] श्लोकार्धे विशेषतो यतिः। उदाहरणं यथा--

स्थितः स्थितामुच्चलितः प्रयातां निषदुषीमासनबन्धधीरः।

[३] व्यक्तविभक्तिके अव्यक्तविभक्तिके वा चतुरादिवर्णकपदान्तेऽपि यतिर्भवति। उदाहरणं व्यक्तविभक्तिके मन्दाक्रान्तायां--

यक्षश्चक्रे--जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु।

अव्यक्तविभक्तिके चतुरादिवर्णकपदान्ते तत्रवोदाहरणं यथा--

कश्चित्कान्ता--विरहगुरुणा स्वाधिकारात्प्रमत्तः।

[४] पूर्वापरभागयोरेकाक्षरात्मकत्वाऽभावे पदमध्येऽपि यतिर्यथा--

खेलल्लोलम्बकोला-हलमुखरितदिक्चक्रवालान्तरालम्।

[५] पूर्वापरभागयोरेकाक्षरात्मकत्वाऽभावे संहितैकादेशः क्वचित् पूर्वान्तवद्भवति, तत्रैव यतिश्च भवति। यथा--

[१] जम्भारातीभकुम्भो-द्भवमिव दधतः सान्द्रसिन्दूररेणून्। [२]वाताङ्कूराजिहीर्षादरविवृतफणाश्रृङ्गभूषाभुजङ्गम्।

---

१ अयं विचारः परीक्षानुपयोगी। २ सन्धिकार्यसमासाद्यभावकृतोऽत्र पूर्वतो विशेषः।

[६] एकादेशो यतौ क्वचित्परादिवद्भवति । यथा–

अन्तेवासिदयालुरुज्झितनये–नाऽऽसादितो जिष्णुना ।

[७] यतौ यणादशः परादिवद्भवति । यथा––

वितत घनतुषारक्षोदशुभ्रासु दूर्वा–
स्वविरलपदमालाश्यामलामुल्लिखन्तः ।

[८] यतौ चादीनां पूर्वसम्बन्धनित्यत्वं भवति । यथा––

स्वादुस्वच्छं सलिलमपि च–प्रीतये कस्य न स्यात् ।

[९] यतौ प्रादीनां परसम्बन्धनित्यता भवति । यथा––

दूरारूढ–प्रमोदं हसितमिव–परिस्पृष्टमाशासखीभिः ।

(१) आर्या [मात्रा छन्द]

**यस्याः पादे प्रथमे द्वादश मात्रास्तथा तृतीयेऽपि ।
अष्टादश द्वितीये, चतुर्थके पञ्चदश साऽऽर्या ॥ १३ ॥**

[टीका] यस्या जातेः प्रथमे पादे तृतीये च पादे द्वादश मात्रा भवन्ति, द्वितीये च पादे अष्टादश मात्रा भवन्ति, चतुर्थे तु पादे पञ्चदश मात्रा भवन्ति सा आर्या जातिर्भवति ।

[भाषा] जिस जाति के पहिले और तीसरे पादे में १२, १२ मात्रा हों, और दूसरे पाद में १८ मात्रा हों, तथा चौथे पाद में १५ मात्रा हों तो वह 'आर्या' कहलाती हैं ।

१ पाद—	मात्रा १२	२ पाद—	मात्रा १८
३ पाद—	मात्रा १२	४ पाद––	मात्रा १५

उदाहरण––

ऽ ऽ ऽ । । ऽ१२ ऽ । । ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ ऽ१८
[१] यस्याः पादे प्रथमे–(२) द्वादश मात्रास्तथा तृतीयेऽपि ।
ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ१२ । ऽ । ऽ ऽ । । । ऽ ऽ१५
[३] अष्टादश द्वितीये––[४] चतुर्थके पञ्चदश सार्या ।

(२) अनुष्टुप् छन्द [८ अक्षरपाद]

श्लोके षष्ठं गुरु ज्ञेयं, सर्वत्र लघु पञ्चमम् ।
द्विचतुष्पादयोर्ह्रस्वं सप्तमं, दीर्घमन्ययोः ॥ १४ ॥

[टीका] यत्र पञ्चमं, लघु. षष्ठं गुरु; द्वितीये चतुर्थे पादे च सप्तमं ह्रस्वं,प्रथमे तृतीये च सप्तमं गुरु भवति स 'श्लोक'इत्युच्यते ।

[भाषा टीका] जिस [आठ अक्षर के पाद वाले] छन्द में प्रत्येक पाद का **पाँचवाँ** अक्षर लघु हो, और **छठा** गुरु हो, तथा दूसरे व चौथे पाद का **सातवाँ** अक्षर लघु हो, और पहिले तीसरे पाद का **सातवाँ** अक्षर गुरु हो—तो वह 'अनुष्टुप्' या 'श्लोक' व 'पद्य' कहलाता है । उदाहरण—

५ ६ ७ ५ ६ ७
। ऽ ऽ । ऽ ।
[१] श्लोके षष्ठं गुरु ज्ञेयं, सर्वत्र लघु पञ्चमम् । [२]

५ ६ ७ ५ ६ ७
। ऽ ऽ । ऽ ।
[३] द्विचतुष्पादयोर्ह्रस्वं सप्तमं, दीर्घमन्ययोः ॥ [४]

अस्यैव 'पद्य'मित्यपि व्यवहारः । तदुक्तं--

'पञ्चमं लघु सर्वत्र सप्तमं द्विचतुर्थयोः ।
षष्ठं गुरु विजानीयादेतत्पद्यस्य लक्षणम्' ॥

[भाषाटीका] जिस छन्द के चारो चरणों में **पाँचवाँ** अक्षर लघु हो और छठा गुरु हो, तथा दूसरे चौथे चरण में **सातवाँ** अक्षर लघु हो और (तीसरे चौथे पाद का **सातवाँ** अक्षर गुरु हो) तो उसे 'पद्य' कहते हैं ॥

(३) इन्द्रवज्रा [११ अक्षर का पाद]

यस्यां त्रिषट्सप्तममक्षरं स्या-
द्ध्रस्वं सुबुद्धे ! नवमञ्च तद्वत् ।

वाचा विलज्जीकृतवागधीशा-
स्तामिन्द्रवज्रां ब्रुवते कवीन्द्राः ॥ १८ ॥

[टीका] यस्यां प्रतिचरणं तृतीय-षष्ठ-सप्तम-नवमानि अक्षराणि लघूनि स्युः, सा 'इन्द्रवज्रा' भवति ।

तदुक्तं वृत्तरत्नाकरेपि--

'स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः'-इति ।

[भाषाटीका] जिस छन्द के प्रत्येक पाद में **तीसरा, छठा, सातवाँ** और **नवाँ** [३-६-७ ९] अक्षर ह्रस्व (लघु) हो, और बाकी अक्षर दीर्घ (गुरु) हों तो उस छन्द को कवीश्वर गण 'इन्द्रवज्रा' कहते हैं । उदाहरण--

त० त० ज० गु० गु०

ऽ ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ

यस्यांत्रि—षट्सप्त—ममक्ष—रं—स्या-
ध्द्रस्वंसु—बुद्धे ! न—वमं च—त—द्वत् ।
वाचा वि—लज्जीकृ—तवाग—धी—शा-
स्तामिन्द्र—वज्रां ब्रु—वते क—वी—न्द्राः ।

[४] उपेन्द्रवज्रा [११ अक्षर]

यदीन्द्रवज्राचरणेषु पूर्वे
भवन्ति वर्णा लघवः सुबुद्धे ! ।
विचारसम्पत्प्रथितैस्तदानी-
मुपेन्द्रवज्रा कथिता कवीन्द्रैः ॥ १९ ॥

---

१. अर्थात् जिस छन्द में दो तगण, एक जगण, और दो गुरु हों वह इन्द्रवज्रा कहलाता है । जैसे—त. ऽऽ।, त. ऽऽ।, ज. ।ऽ।, गु. ऽ गु. ऽ ।

२. 'यदीन्द्रवज्राचरणेषु पूर्वो विभर्त्ति वर्णो लघुतां सुबुद्धे' इत्येवं तु परे पठन्ति ।

[टीका] यदीन्द्रवज्रायाश्चतुर्षु चरणेषु प्रत्येकं प्रथमो वर्णो लघुः स्यादन्यदिन्द्रवज्रावदेव तदा सा 'उपेन्द्रवज्रा' भवति।

तदुक्तं वृत्तरत्नाकरेऽपि-उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ-इति।

[भाषाटीका] यदि इन्द्रवज्रा छन्द के चारों पादों का पहिला अक्षर गुरु न होकर लघु हो तो उसे 'उपेन्द्रवज्रा' कहते हैं।[1]

उदाहरण—

ज० त० ज० गु गु

।ऽ। ऽऽ। ।ऽ। ऽ ऽ

यदीन्द्र—वज्रा च—रणेषु—पू—र्वे

भवन्ति—वर्णा ल--घवः सु--बु--द्धे ! ।

गुरु प्र--साद प्र--थितैस्त--दा--नी-

मुपेन्द्र--वज्रा क--थिता क--वी--न्द्रैः ।

(५) उपजातिः [११ अक्षर पाद]

यत्र द्वयोरप्यनयोस्तु पादा

भवन्ति साध्वि ! विनीतबुद्धे ! ।

विद्वद्भिराद्यैः परिकीर्त्तिता सा

प्रयुज्यतामित्युपजातिरेषा ॥ १७ ॥

[टीका] यत्र वृत्ते इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रयोरुभयोरपि पादा मिलिताः स्युस्तद्वृत्तम् उपजातिरिति कवयो भणन्ति। तदुक्तं वृत्तरत्नाकरे-

'अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः।

इत्थं किलान्यास्वपि मिश्रितासु वदन्ति जातिष्विदमेव नाम॥'

इति।

---

१. यत्र जगणतगणजगणा गुरुद्वयञ्च क्रमेण न्यस्यते सा उपेन्द्रवज्रेति गीयते। यथा--ज. ।ऽ।, त. ऽऽ। ज. ।ऽ।, गु. ऽ गु. ऽ इति।

[**भाषाटीका**] जिस छन्द का कोई चरण इन्द्रवज्रा का हो, और कोई चरण उपेन्द्रवज्रा का हो तो उसे '**उपजाति**' कहते हैं । उदाहरण–

त त ज ग. ग.

ऽऽ। ऽऽ। ।ऽ। ऽऽ

[१] यत्र द्वयोरप्यनयोस्तु पादा [इन्द्रवज्राचरण]

ज त ज गु गु.

।ऽ। ऽऽ। ।ऽ। ऽऽ

[२] भवन्ति सद्विद्य ! विशालबुद्धे ! । [उपेन्द्रवज्राचरण]

ऽऽ। ऽऽ। ।ऽ। ऽऽ

[३] विद्वद्भिराद्यैः परिकीर्त्तिता सा [इन्द्रवज्राचरण]

।ऽ। ऽऽ। ।ऽ। ऽ ऽ

[४] प्रयुज्यतामित्युपजातिरेषा ॥ [उपेन्द्रवज्राचरण]

इस उदाहरण में पहिला तीसरा चरण '**इन्द्रवज्रा**' का है, और दूसरा व चौथा चरण '**उपेन्द्रवज्रा**' का है इस लिए यह **उपजातिवृत्त** कहलाता है ।

(६) भुजङ्गप्रयातम् [१२ अक्षर का पाद]

यदाऽऽद्यं चतुर्थं तथा सप्तमं चे-
त्तथैवाक्षरं ह्रस्वमेकादशाद्यम् ।
लसत्कीर्त्ति-वैदुष्य-शोभावितानै-
स्तदोक्तं कवीन्द्रैर्भुजङ्गप्रयातम् ॥ १८ ॥

[टीका] यस्मिन् द्वादशाक्षरे वृत्ते प्रथमं चतुर्थं सप्तमं दशमं चाक्षरं ह्रस्वं भवति,–तत् 'भुजङ्गप्रयातं' नाम वृत्तं भवति ।

तदुक्तं वृत्तरत्नाकरे-'भुजङ्गप्रयातं भवेद्यैश्चतुर्भिः-' इति ।

[भाषा] जिस छन्द के प्रत्येक चरण के १-४-७-१० अक्षर लघु हों उसे 'भुजङ्गप्रयात' कहते हैं । उदाहरण-

य. य. य. य.

।ऽऽ ।ऽऽ ।ऽऽ ।ऽऽ

यदाद्यं चतुर्थं तथास-प्तमं चे-
त्तथैवा-क्षरं ह्रस्वमेका-दशाद्यम् ।
लसत्की-र्त्तिवैदु-ष्यशोभा-वितानै-
स्तदोक्तं कवीन्द्रै-र्भुजङ्ग-प्रयातम् ॥

(७) द्रुतविलम्बितम् [१२ अक्षर का पाद]

अयि सखे ! ननु यत्र चतुर्थकं,
गुरु च सप्तमकं दशमं तथा ।
विरतिजश्च तथैव,-विचक्षणै-
र्द्रुतविलम्बितमित्युपदिश्यते ॥ १६ ॥

[टीका] यत्र द्वादशाक्षरघटितपादवतिच्छन्दसि चतुर्थ-सप्तम-दशम-द्वादशा वर्णा गुरवः स्युः तत्-द्रुतविलम्बितं' वृत्तं भवति । तदुक्तं वृत्तरत्नाकरेऽपि-"द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ"-इति ।

[भाषाटीका] बारह अक्षर के पाद वाले जिस छन्द में चौथा, सातवाँ, दशवाँ और बारहवाँ [४-७-१०-१२] अक्षर गुरु हो तो उसे

१ जिसके प्रत्येक पाद में चार यगण । ऽ ऽ हों वह **भुजङ्गप्रयात** छन्द होता है ।

२ जिसके हर एक चरण में नगण भगण भगण रगण हों वह **द्रुतविलम्बित** छन्द कहलाता है ।

[न. ।।। भ. ऽ ।।, भ ऽ ।। रगण ऽ । ऽ]

कविगण 'द्रुतविलम्बित' छन्द कहते हैं। उदाहरण--

न० भ० भ० र०

। । । ऽ । । ऽ । । । ऽ । ऽ

[१] अ-यि-स खे!न-नु य-त्र-च-तु-र्थ-कं

[२] गु-रु-च सप्तम--कं द-श-मं त-था।

[३] वि-र-ति जं च-त थै-व वि च-क्ष-णै-

[४] द्रु-त-वि लम्बि-त मित्युप-दि श्य-ते।

(८) वंशस्थ(विलं) [१२ अक्षर पाद]

उपेन्द्रवज्राचरणेषु सन्ति चे-

दुपान्त्यवर्णा लघवः कृताः सखे !

स्फुरत्प्रभावोज्ज्वलकीर्तिशालिनो

वदन्ति वंशस्थमिदं बुधास्तदा ॥ २० ॥

[टीका] उपेन्द्रवज्रायाश्चरणेषु एकादशो वर्णो लघुः स्यात् [न तु गरुः] तथा द्वादशश्च गरुः-तदा वंशस्थं [वंशस्थस्थविलं वा] वृत्तं भवति।

तदुक्तं वृत्तरत्नाकरेऽपि-"जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ-इति।

[भाषाटीका] उपेन्द्रवज्रा के चारों पादों का ग्यारहवाँ अक्षर [गुरु न होकर] लघ ही हो तो उसे **वंशस्थ [विल]** वृत्त कहते हैं।

उदाहरण--

ज० त० ज० र०

[१] उ-पे-न्द्र व-ज्रा च-र णे-षु स-न्ति-चे-

१ जिस छन्द के प्रत्येक चरण में जगण । ऽ ।, तगण ऽ ऽ । जगण । ऽ ।, रगण ऽ । ऽ हों तो वह वंशस्थ छन्द कहलाता है।

। ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ
[२] दुपान्त्यवर्णा लघवः कृता मुदा ।
। ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ
[३] स्फुरत्प्रभावोज्ज्वलकीर्त्तिशालिनो
। ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ
[४] वदन्ति वंशस्थविलं बुधास्तदा ॥

(९) प्रहर्षिणी [१३ अक्षर पाद]

आद्यञ्चेत्त्रितयमथाष्टमं नवान्त्यं
चोपान्त्यं गुरु विरतौ तथा प्रयुक्तम् ।
विश्रामो भवति महेशनेत्रदिग्भि-
र्विज्ञेया ननु सुभग ! प्रहर्षिणी सा ॥ २१ ॥

[टीका] यत्र त्रयोदशाक्षरपादशालिनि वृत्ते प्रथमं,-द्वितीयं, तृतीयम्, अष्टमं, दशमं, द्वादशं, त्रयोदशञ्चाक्षरं गुरु भवेत्, एवं-त्रिभिर्दशभिश्चाक्षरैर्विश्रामो भवेत् सा 'प्रहर्षिणी' भवति ।

तदुक्तं वृत्तरत्नाकरेऽपि—'म्नौ ज्रौ गस्त्रिदशयतिः प्रहर्षिणी-यम्—' इति ।

[भाषाटीका] जिस छन्द के प्रत्येक पाद में १-२-३-८-१०-१२-१३ अक्षर गुरु हों, और प्रत्येक पाद में तीन अक्षर और दश (अर्थात् तीसरे व तेरहवें) अक्षरों पर विराम हो तो वह प्रहर्षिणी छन्द होता है ।

उदाहरण—

म०	न०	ज०	र०	गु०
ऽऽऽ	।।।	।ऽ।	ऽ।ऽ	ऽ
आ द्य ञ्चे	त्रि त य	म था ष्ट	मं न वा	न्त्यं
चोपान्त्यं	गु रु वि	र-तौ त	था-प्र-यु	क्तम् ।
विश्रामो	भ-व-ति	म-हे-श-	ने-त्र-दि	ग्भि-
र्वि-ज्ञे या	न नु-सु	भग ! प्र	ह र्षि	णी सा ॥

१. श्लोके उपान्त्यं=द्वादशम् । विरतौ=अन्तेच, अर्थात् त्रयोदशमक्षरम् । तथा=गुरु स्यादित्यर्थः ।

(१०) वसन्ततिलका [१४ अक्षर पाद]

आद्यं द्वितीयमपि चेद्गुरु तच्चतुर्थं
यत्राष्टमञ्च दशमान्त्यमुपान्त्यमन्त्यम् ।
तर्काङ्कुशाङ्कुशितवादिमतङ्गजेन्द्राः
प्राज्ञा वसन्ततिलकां किल तां वदन्ति ॥ २२ ॥

[टीका] यस्मिन्-चतुर्दशाक्षरपादशालिनिच्छन्दसि, प्रथमं द्वितीयं, चतुर्थम्, अष्टमम्, एकादशं, त्रयोदशं, चतुर्दशं चाक्षरं गुरु भवति तच्छन्दो 'वसन्ततिलका' इति कवयो वदन्ति। तदुक्तं-वृत्तरत्नाकरेऽपि-"उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः" इति ।

[भाषाटीका] जिस [१५ अक्षर पाद वाले] छन्द में प्रत्येक पाद में १-२-४-८-११-१३-१४ वां अक्षर गुरु हो उसे 'वसन्ततिलका' कहते हैं । उदाहरण--

त०	भ०	ज०	ज०	गु	गु
ऽ ऽ ।	ऽ । ।	। ऽ ।	। ऽ ।	ऽ	ऽ

[१] आ-द्यं-द्वि ती-य-म पि चे- द्गु रु त-च्च—तु—र्थं
[२] य-त्रा-ष्ट म-ञ्च-द शमान्त्य मु-पान्त्य–म—न्त्यम् ।
[३] स-त्त र्क युक्तिजि तवा-दि म त ङ्ग—जे-—न्द्राः
[४] प्राज्ञा-व सन्तति लकां कि ल-तां व--द---न्ति ॥

(११) मालिनी [१५ अक्षर पाद]

प्रथममगुरु षट्कं विद्यते यत्र वृत्ते
तदनु च दशमञ्चेदक्षरं द्वादशान्त्यम् ।

---

१. जिस छन्द के प्रत्येक चरण में तगण ऽऽ।, भगण ऽ।।, जगण ।ऽ।, जगण ।ऽ।. एवं दो गुरु ऽऽ हों वह 'वसन्ततिलका' कहलाता है ।

करिभिरथ तुरङ्गैर्यत्र च स्याद्विरामः
सुकविजनमनोज्ञा मालिनी सा प्रसिद्धा ॥ २३ ॥

[**टीका**] यस्मिन् पञ्चदशाक्षरपादवतिच्छन्दसि आद्याः षट्, तदनु-दशमः, एवं त्रयोदशश्च-इमे वर्णा लघवो भवन्ति, अष्टभिः सप्तभिश्च (अष्टमे पञ्चदशे चाक्षरे) विरामो भवति सा 'मालिनी'ति कविभिः कथ्यते । तदुक्तं वृत्तरत्नाकरेऽपि-'न-न-म-य-य-युतेयं मालिनी भोगिलोकैः"—इति ।

[**भाषा टीका**] जिस [१५ अक्षरपाद वाले] छन्द में प्रत्येक पाद में १-२-३-३-४-५-६-१०-१३ वाँ अक्षर लघु हों, और प्रत्येक आठ और सात (आठवें पन्द्रहवें) अक्षर पर विश्राम होता हो तो उसे '**मालिनी**' छन्द कहते हैं ।

उदाहरण—

न० न० म० य० य०

। । । । । । ऽऽऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

प्रथ-म--मगुरु—षट्कं वि-द्यते य--त्र वृत्ते
तद-नु--च दश--मश्चेद्-क्षरं द्वा-दशान्त्यम् ।
करिभि-रथ तु—रङ्गैर्य--त्र च स्या-द्विरामः
सुकवि--जनम-नोज्ञा मा-लिनी सा-प्रसिद्धा ॥

(१२) हरिणी [१७ अक्षर]

सुमुखि ! लघवः पञ्च प्राच्यास्ततो दशमान्तिक-
स्तदनु च सखे ! वर्णौ स्यातां लघू त्रिचतुर्दशौ ।

१. जिस छन्द में—नगण ।।।, नगण ।।।, मगण ऽऽऽ, यगण ।ऽऽ, यगण ।ऽऽ हों और भोगी नाम आठ और लोक नाम सात (अर्थात् ८ वें व १५ वें) अक्षर पर यति हो तो उसे मालिनी कहते हैं ।

प्रभवति पुनर्यत्रोपान्त्यः स्फुरद्गुणशील ! हे !
यतिरपि रसैर्वेदैरश्वैः स्मृता हरिणीति सा ॥ २४ ॥

[टीका] यस्मिन्त्सप्तदशाक्षरपादशालिनिच्छन्दसि आद्याः पञ्च वर्णा लघवो—ह्रस्वाः स्युः, तदनु-एकादशः, त्रयोदशः, चतुर्दशः षोडशश्च वर्णोऽपि लघुर्नाम ह्रस्वो भवेत्। किञ्च षड्भिः-चतुर्भिः सप्तभिश्च विरामो भवेत्सा 'हरिणी'ति कविभिरुच्यते। तदुक्तं वृत्तरत्नाकरे-"रसयुगहयैर्न्सौ म्रौ स्लौ गो यदा हरिणी तदा—" इति।

[भाषाटीका] जिस (१७ अक्षर पाद वाले) छन्द में-प्रति चरण में १-२-३-४-५-११-१३-१४-१६ वाँ अक्षर लघु हो और-६-४-७ अक्षरों पर विराम हो (अर्थात् ६ ठे १० वें १७ वें अक्षर पर विश्राम हो) तो उसे 'हरिणी छन्द' कहते हैं।

उदाहरण—

न०	स०	म०	र०	स०	ल०	ग०
।।।	।।ऽ	ऽऽऽ	ऽ।ऽ	।।ऽ	।	ऽ

सुमुख!-लघवः-पञ्च प्रा-च्यास्ततो-दशमा—न्ति—क—
स्तदनु—च सखे-! वर्णौ स्या-तां लघू-त्रिचतु—र्द—शौ।
प्रभव —ति पुन—र्यत्रो-पा-न्त्यः स्फुर-द्गुणशी-ल!—हे !
यतिर—पि रसै—र्वेदै-र-श्वैः स्मृता-हरिणी ति—सा ॥

---

१. जिस छन्द में प्रत्येक चरण में **नगण** ।।।, **सगण** ।।ऽ, **मगण** ऽऽऽ, **रगण** ऽ।ऽ, **सगण** ।।ऽ, हो, तथा एक **लघु**—।, और एक **गुरु**—ऽ हों, एवं रस नाम छठे, **युग** नाम चौथे, हय नाम सातवें अक्षर पर विश्राम हो तो उसे '**हरिणी**' कहते हैं।

(१३) शिखरिणी [१७ अक्षर]

यदा पूर्वो ह्रस्वः सुविमलमते ! षष्ठकपरा-
स्ततो वर्णाः पंञ्च प्रकृतिसरलोदार ! लघवः ।
त्रयोऽन्ये चोपान्त्या गुरुजनमनोमोहन ! सखे !
रसै रुद्रैर्यस्यां भवति विरतिः सा शिखरिणी ॥ २८ ॥

[**टीका**] यस्मिन् वृत्ते-प्रथमः सप्तमः अष्टमः, नवमः दशमः, एकादशः, चतुर्दशः, पञ्चदशः षोडशश्च वर्णो लघुर्नाम-ह्रस्वो भवेत् । किञ्च षड्भिरेकादशैश्चाक्षरैर्विरामो भवति सा 'शिखरिणी' नाम भवति । तदुक्तं—वृत्तरत्नाकरेऽपि—'रसै रुद्रैश्छिन्ना य-म-न-स-भ-ला गः शिखरिणी-' इति ।

[**भाषाटीका**] जिस छन्द के प्रत्येक चरण में १-७-८-९-१० ११-१४-१५-१६ वाँ अक्षर लघु हो, (और २-३-४-५-६-१२-१३ १७ अक्षर गुरु हों) और ६-११ अक्षरों पर (याने छठे और सत्रहवें अक्षर पर) विराम हो तो उसे **'शिखरिणी छन्द'** कहते हैं ।

उदाहरण—

य०	म०	न०	स०	भ०	ल०	गु०
।ऽऽ	ऽऽऽ	।।।	।।ऽ	ऽ।।	।	ऽ
यदा-पू	र्वो-ह्रस्वः	सुविम	लमते !	षष्ठक	प	रा—
स्ततो व	र्णाः पञ्च	प्रकृति	सरलो	दारल	घ	वः ।
त्रयोऽन्ये	चोपान्त्या	गुरु ज	नमनो	-मोहन !	स	खे !
रसै रु—	-द्रैर्यस्यां	भवति	विरतिः	सा शिख	रि	णी ॥

---

१. जिस छन्द में यगण—। ऽ ऽ, मगण—ऽ ऽ ऽ, नगण—। । ।, सगण—। । ऽ, भगण—ऽ । ।, हो तथा एक लघु—।, और एक गुरु—ऽ हो, एवं छठे और ग्यारहवें अक्षर पर विराम हो तो उसे शिखरिणी छन्द कहते हैं।

(१४) मन्दाक्रान्ता [१७ अक्षर]

चत्वारः प्राक्सुमुख ! गुरवो द्वौ दशैकादशौ चे-
द्वत्ते वर्णौ तदनु च सखे ! द्वौ गुरू द्वादशान्त्यौ ॥
तद्वच्चान्त्यौ युगरसहयैर्यत्र च स्याद्विरामो
मन्दक्रान्तां प्रवरकवयस्तां मुदा सङ्गिरन्ते ॥ २६ ॥

[टीका] यत्र सप्तदशाक्षरपादशालिनिच्छन्दसि-प्रथमः द्वितीयः, तृतीयः, चतुर्थः दशमः, एकादशः, त्रयोदशः, चतुर्दशः, षोडशः सप्तदशश्च वर्णो गुरुः स्यात्तथा-चतुर्भिः, षड्भिः, सप्तभिश्च विरामः स्यात्तत्खलु छन्दो 'मन्दक्रान्ता' नाम भवति।

तदुक्तं वृत्तरत्नाकरेऽपि--'मन्दाक्रान्ता जलधिषडगैर्म्भौ नतौ ताद्गुरू चेत्' इति।

[भाषाटीका] जिसके प्रत्येक चरण में पहला दूसरा, तीसरा चौथा, दशवाँ, ग्यारहवाँ, तेरहवाँ, चौदहवाँ, सोलहवाँ, सत्रहवाँ, [१-२-३-४ १०-११-१३-१४-१६-१७] अक्षर गुरु हो, और चार, छै, सात इन अक्षरों पर प्रत्येक पाद में विराम हो तो उसे 'मन्दाक्रान्ता' कहते हैं।

उदाहरण--

म०	भ०	न०	त०	त०	गु०	गु०
ऽऽऽ	ऽ।।	।।।	ऽऽ।	ऽऽ।	ऽ	ऽ
चत्वारः	प्राक्सु मु	ख गुर	वो-द्वौ-द	शै का द	शौ	चे—
द्वत्ते-व	र्णौ-तद	नु च स	खे-द्वौ-गु	रू द्वा द	शा	न्त्यौ।
तद्व च्चा	न्त्यौ युग	र-सह	यैर्यत्र	च स्याद्वि	रा	मो
मन्द क्रा	न्तां प्रव	रकव	यस्तां मु	दा-सङ्गि	र	न्ते ॥

१. जिस छन्द में—**मगण ऽ ऽ ऽ, भगण ऽ । ।, नगण । । ।, तगण--ऽ ऽ ।, तगण—ऽ ऽ ।,** हों एवं अन्त्य में दो अक्षर गुरु हों एवं चौथे दशवें सत्रहवें अक्षर पर विराम हो तो उसे कविजन **मन्दाक्रान्ता छन्द** कहते हैं।

(१५) शार्दूल-विक्रीडितम् [१९ अक्षरपाद]

आद्याश्चेद्गुरवस्त्रयः किल सखे ! षष्ठस्तथा चाष्टमो-
नन्वेकादशतस्त्रयस्तदनु चेदष्टादशाद्यौ ततः ।
मार्त्तण्डैर्मुनिभिश्च यत्र विरतिः षड्शास्त्रपारङ्गताः-
प्राज्ञास्तं प्रवदन्ति काव्यरसिकाः शार्दूलविक्रीडितम् ॥

[टीका] यत्रवृत्ते-प्रथम-द्वितीय-तृतीय षष्ठाऽष्टम-द्वादश-त्रयोदश चतुर्दशषोडशे सप्तदशे कोनविंशौ वर्णा गुरवः स्युः, तथा द्वादशभिः सप्तभिश्च यतिः स्यात्तत् 'शार्दूल-विक्रीडितं' छन्दो भवति। तदुक्तं वृत्तरत्नाकरेऽपि-"सूर्याश्वैर्मसजस्तताः सगुरवः शार्दूलविक्रीडितम्"-इति।

[भाषा टीका] जिस छन्द में प्रत्येक पाद में १-२-३-६-८-१२-१३-१४-१६-१७-१९ वाँ ये अक्षर गुरु हों, १२-और ७ पर (अर्थात् १२ वें १९ वें पर) विराम हो तो, वह 'शार्दूलविक्रीडित' छन्द होता है।

उदाहरण—

म	स	ज	स	त	त	गु
SSS	IIS	ISI	IIS	SSI	SSI	S
आद्याश्चेद्गुरव		स्त्रयःशृ णु ! सखे ! षष्ठस्त थाचाष्ट				मः

[इत्यादि]

इसी प्रकार बाकी तीनों पादों में समझना।

(१६) स्रग्धरा [२१ अक्षर]

चत्वारो यत्र वर्णाः प्रथममलघवः षष्ठकः सप्तमोऽपि
द्वौ तद्वत्षोडशाद्यौ सहृदय ! भवतः षोडशान्त्यौ तथान्त्यौ।

---

१. जिस छन्द में (प्रत्येक चरण में) **मगण** SSS, **सगण** IIS, **जगण** ISI, **सगण**-IIS **तगण**-SSI, **तगण** -SSI, हो तथा अन्तिम एक अक्षर गुरु हो, एवं **सूर्य** नाम १२ वें, **अश्व**नाम ७ अक्षर (१२ वें १९ वें) पर विराम हो तो वह **शार्दूलविक्रीडित** छन्द कहलाता है।

विद्याभ्यासोरुबुद्धे ! मुँनिमुँनिमुँनिभिर्दृश्यते चेद्विरामो
प्राझैर्वन्द्यैः कवीन्द्रैः सपदि निगदिता स्रग्धरा सा प्रसिद्धा २८

[टीका] यस्मिन् एकविंशत्यक्षरपादशालिनि वृत्ते प्रत्येकं चतुर्षु चरणेषु प्रथमो, द्वितीयः, तृतीयः, चतुर्थः, षष्ठः, सप्तमः चतुर्दश, पञ्चदशः, सप्तदशः, अष्टादशः, विंशः, एकविंशश्च वर्णो गुरुर्भवति, एवं सप्तसु सप्तसु वर्णेषु च त्रिवारं विरामो भवति, तच्छन्दः-कविभिः 'स्रग्धरा' इत्युच्यते।

तदुक्तं वृत्तरत्नाकरेऽपि—

"म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्त्तितेयम्[१]" इति।

[भाषा टीका] जिस २१ अक्षर के पाद वाले छन्द में प्रति चरण में १-२-३-४-६-७-१४-१५-१७-१८-२०-२१ ये अक्षर गुरु हों (और बाकी के अक्षर लघु हों) तथा प्रत्येक ७ वें वर्ण पर विराम हो [अर्थात् प्रत्येक पाद में सातवें ७ चौदहवें १४ और इक्कीसवें २१ अक्षर पर विराम हो] तो उसको **'स्रग्धरा'** वृत्त कहते हैं।

उदाहरण—

म०	र०	भ०	न०	य०	य०	य०
SSS	SIS	SII	III	ISS	ISS	ISS
चत्वारो	यत्र-व	र्णाःप्रथ	ममल	घवः,ष	ष्ठ-कःस	प्तमोऽपि

[इत्यादि]

इति श्रीगुरुप्रसादशास्त्रिव्याकरणाद्याचार्यविरचिता **छन्दो-मन्दाकिनी।**

१. जिस छन्द में **मगण SSS, रगण-SIS, भगण SII, नगण-III, यगण-ISS, यगण-ISS, यगण-ISS,** हो एवं त्रिमुनि नाम सातवें सातवें अक्षर पर तीनवार यति हो तो वह **'स्रग्धरा'** छन्द कहलाता है।

भार्गव भूषण प्रेस, गायघाट, बनारस।

